(घ) रहस्यानुभूति (Mystic-experience)—इसे भी धार्मिक विश्वास का अनिवार्य आधार माना गया है। धर्म-दर्शन के विद्वान तो रहस्य की अनुभूति को ईश्वर से भी अधिक व्यापक मानते हैं। तात्पर्य यह है कि धर्म ईश्वर के बिना चल सकता है परन्तु रहस्यात्मक अनुभूति के बिना नहीं। इसीलिए प्रायः धर्म में रहस्यात्मक अनुभूति की चर्चा अवश्य होती है। यह धार्मिक विश्वास का प्रबल आधार है। इसकी विस्तृत विवेचना रहस्यवाद में देखें।

Scanned by TapScanner

रहस्यवाद

साधारणतः सामान्य बोल-चाल की भाषा में 'रहस्य' का अर्थ गुप्त, गुह्य, एकान्त, अप्रकट आदि हुआ करता है। किसी रहस्य का उद्‌घाटन करते समय हम गुप्त ज्ञान का प्रकाश करते हैं अथवा गुह्य-ग्रन्थि का विमोचन करते हैं, अप्रकट को प्रकट करते हैं। गुप्त प्रकट होने के पश्चात् दुर्लभ नहीं; सुलभ हो जाता है, गोपनीय ज्ञान का रूप धारण कर लेता है। ज्ञान भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त होता है। अतः भाषा के सहारे अनभिव्यक्त गुप्त ज्ञान अभिव्यक्त वाद या सिद्धान्त का रूप धारण कर लेता है। साधारणतः गुप्त ज्ञान की अभिव्यक्ति ही रहस्यवाद है, परन्तु इसमें एक कठिनाई है। गुप्त ज्ञान की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती और यदि अभिव्यक्ति हो गई तो गुप्त ज्ञान नहीं कहला सकता। इस कठिनाई को दार्शनिक दूर करते हैं। दार्शनिकों का कहना है कि रहस्यवाद गुप्त ज्ञान का प्रकाश ही नहीं, वरन् गुह्य अनुभूति का प्रकाश है। ज्ञान अनुभूति से अलग नहीं परन्तु अनुभूति अत्यन्त व्यापक है। अनुभूति अव्यक्त और व्यक्त दोनों हुआ करती है। ज्ञान केवल व्यक्त अनुभूति है, क्योंकि यह भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त होता है। अव्यक्त आन्तरिक अनुभूति को व्यक्त करने में भाषा असमर्थ है। अतः दर्शन के क्षेत्र में रहस्यवाद भाषा की असमर्थता बतलाते हुए आन्तरिक अनुभूति की गहराई तक पहुँचाने का प्रयास करता है। प्रश्न यह है कि यदि भाषा आन्तरिक भाव पर प्रकाश डालने में असमर्थ है तो रहस्यवाद को शब्दों में व्यक्तकर उसके स्वरूप को विकृत क्यों किया जाता है? उत्तर यह है कि शब्द पूर्णतः सक्षम नहीं, परन्तु नितान्त अक्षम भी नहीं। ये गुप्त ज्ञान की ग्रन्थि पूरी तरह नहीं खोल सकते, परन्तु गुह्य की ओर संकेत अवश्य कर सकते हैं, आन्तरिक अनुभूति की ओर इंगित अवश्य कर सकते हैं। इसके सहारे ही गुह्य अन्धकार प्रकट प्रकाश में आता है। यदि शब्दों के माध्यम से प्रकटीकरण की प्रक्रिया रुक जाय तो आन्तरिक अनुभूति के रत्न कभी प्रकाश में ही नहीं आयेंगे तथा व्यक्तिगत विभूति बनकर ही समाप्त हो जायेंगे, कभी सामाजिक सम्पत्ति न हो पायेंगे। अन्तरंग अनुभूति के आकलन के लिये स्वानुभूति ही अपेक्षित है, परन्तु शब्द से भाषा के माध्यम से स्वरूप का परिचय अनुपयोगी नहीं।

रहस्यवाद को अंग्रेजी में मिस्टीसिज्म (Mysticism) कहते हैं। यह शब्द यूनानी भाषा के Muo क्रिया में 'मैं चुप हूँ' अर्थ को बतलाता है। यह मम (Mum)

Scanned by TapScanner

अर्थात् मौन रहना या चुप्पी साधना है। जो अनुभूति की गहराई तक पहुंच जाता है, वह मौन साध लेता है। कुछ लोगों का कहना है कि अंग्रेजी के 'मिस्टिक' शब्द की उत्पत्ति ग्रीक 'मिस्टेस' या 'मस्टेस' से हुई जिसका अर्थ किसी सुयोग्य गुरु से जीवन मरण के गूढ़ तत्वों का ज्ञान प्राप्त करना है। गूढ़ ज्ञान रहस्य है और इसका उद्घाटन ही रहस्यवाद है। कुछ लोग रहस्यवाद को जादू-टोनावाद (ऑकल्टिज्म) समझते हैं, कुछ लोग इसे प्रतीकवाद (सिम्बोलिज्म) भी समझते हैं, परन्तु रहस्यवाद सबसे भिन्न है। रहस्यवाद तो उत्पन्न गुह्य ज्ञान है जिसकी शाब्दिक अभिव्यक्ति असम्भव सी है। गीता में भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को बतलाया है कि मुझ सर्वज्ञ ईश्वर ने तुझसे यह गुह्य से भी गुह्य अत्यन्त गोपनीय—रहस्ययुक्त ज्ञान कहा है। सभी गुह्यों में अत्यन्त गुह्य—रहस्यमुक्त मेरे परम वचन तुम पुनः सुनो—"तू मुझमें मन वाला (चित्त वाला) हो, मेरा भक्त (मेरा भजन करने वाला) हो और मेरा ही पूजन करने वाला हो तथा मुझे ही नमस्कार कर। इस प्रकार करता हुआ; अर्थात् मुझ वासुदेव में ही (अपने) समस्त साध्य, साधन और प्रयोजन को समर्पण करके तू मुझे ही प्राप्त होगा, मैं तुझसे सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ, क्योंकि तू मेरा प्रिय है।"[१] स्पष्ट है कि रहस्य गोपनीय ज्ञान की ग्रन्थि का विमोचन है जिसके माध्यम से सत्य का साक्षात्कार होता है, तत्व के यथार्थ स्वरूप की उपलब्धि होती है। यह बौद्धिक ज्ञान नहीं वरन् दिव्य या अलौकिक ज्ञान है। इस अलौकिक ज्ञान को अभिव्यक्त करने में वाणी असमर्थ है। इसीलिये जिन सन्तों या महात्माओं को इस रहस्य का सही पता चल जाता है वे मौन धारण करना चाहते हैं। उनका मौन गुप्त-ज्ञान या रहस्य का सूचक है। महात्मा बुद्ध आध्यात्मिक (आत्मा-परमात्मा सम्बन्धी) प्रश्नों के उत्तर में मौन रह जाते थे। इसका कारण यह है कि भगवान बुद्ध जानते थे कि रहस्य अनुभूति का विषय है, अभिव्यक्ति का नहीं। तात्पर्य यह है कि निर्विकल्पक अनुभूति सविकल्पक ज्ञान का विषय नहीं बन सकती। 'निर्वाण कैसा है' इस प्रश्न के उत्तर में भगवान् ने बतलाया कि "यह समुद्र से भी गहरा, पर्वत से भी ऊँचा, मधु से भी मीठा है।" तात्पर्य यह है कि निर्वाण निर्विकल्पक अनुभूति का विषय है। शून्य का संकेत शब्दों से नहीं हो सकता।

रहस्यवाद की परिभाषा

(Definition of Mysticism)

प्रायः विद्वान रहस्यवाद को धर्म का पर्याय मानते हैं। अतः धर्म के समान

---

१. (क) इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद् गुह्यतरं मया॥ १८/६३

(ख) सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु में परमं वचः। १८/६४

(ग) मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।

मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे॥ १८/६५

रहस्यवाद की भी परिभाषाएँ अनेक हैं। धर्म के समान रहस्यवाद में भी ज्ञान, भाव और संकल्प तीनों पक्ष पाये जाते हैं। अतः विद्वान तीनों पक्षों को प्रमाण मानकर रहस्यवाद की परिभाषा देते हैं। कुछ लोग रहस्यवाद को मनोवैज्ञानिक आधार मानकर चेतना, अनुभूति और मनोवृत्ति के आधार पर परिभाषा बतलाते हैं; कुछ लोग व्यवहार के आधार पर इसकी क्रिया रूप में परिभाषा करते हैं, तो कुछ विद्वान इसकी साधना और जीवन-पद्धति के रूप में परिभाषा बतलाते हैं। इस प्रकार रहस्यवाद की ज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक तीनों प्रकार की परिभाषायें उपलब्ध हैं, परन्तु समीचीन परिभाषा तो वही होगी जिसमें तीनों पक्षों का समावेश हो।

१. मनोवैज्ञानिक आधार पर रहस्यवाद की परिभाषा—नेटलशिप तथा वाल्टर टी० स्टेस ने रहस्यवाद में ज्ञानात्मक तत्त्व को ही प्रधान माना है। टी० स्टेस का कहना है कि रहस्यवाद एकता की चेतना या ऐक्य का ज्ञान है। यह ज्ञान साधारण बौद्धिक ज्ञान से भिन्न है। अतः इसे अबौद्धिक ज्ञान भी माना गया है; परन्तु यह परिभाषा एकांगी है, क्योंकि इसमें केवल ज्ञान की प्रधानता है। फ्लेडरर महोदय ने बतलाया है कि रहस्यवाद ईश्वर के साथ अपनी एकता का स्पष्ट अनुभव है। रसेल महोदय का कहना है कि यह गम्भीर तथा तीव्र अनुभूति है। ये परिभाषाएँ एकांगी हैं। प्रो० केयर्ड का कहना है कि "यह मन की एक विशेष वृत्ति है जिसके कारण आत्मा के परमात्मा से सम्बन्ध में अन्य सभी सम्बन्ध विलीन हो जाते हैं,"[1] परन्तु यह परिभाषा भी एकांगी है।

२. क्रिया एवं व्यवहार की दृष्टि से रहस्यवाद की परिभाषा—प्रिंगल पैटिसन महोदय का कहना है कि "रहस्यवाद मानव के द्वारा किया गया एक प्रयास है। इस प्रयास का उद्देश्य सर्वोत्कृष्ट सत्ता से सान्निध्य प्राप्त करना है।" इस परिभाषा में क्रिया-पक्ष की प्रधानता है, परन्तु यह भी एकांगी है।

३. जीवन-पद्धति तथा अनुशासन की दृष्टि से रहस्यवाद की परिभाषा—अण्डरहिल महोदय ने बतलाया है कि "यह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा मानव अपने पूर्ण प्रेम को ईश्वर के प्रति प्रकट करता है। यह निरपेक्ष सत्ता से चेतन सम्बन्ध स्थापित करने की कला है।"[2] डॉ० राधाकृष्णन ने भी बतलाया है कि

---

1. Mysticism is the attitude of the mind in which all other relations are swallowed up in the relation of soul to God.
Caird : Evolution to Theology, p. 210.

2. It is the name of that organic process which involves the perfect consummation of the love of God. It is the art of establishing conscious relation with the absolute.
E. Underhill : Mysticism, p. 81.

Scanned by TapScanner

रहस्यवाद एक अनुशासन है जिसके द्वारा आध्यात्मिक उत्कर्ष को प्राप्त किया जाता है। प्रो० ब्राइटमैन के अनुसार रहस्यवाद दैवी सत्ता की साक्षात् अनुभूति है।[1] इस परिभाषा में साक्षात् अनुभूति पर बल दिया गया है जो रहस्यवाद का सार है। सभी रहस्यवादी स्वीकार करते हैं कि यह दिव्यानुभूति है जिसमें उपासक और उपास्य में ऐक्य का अनुभव होता है। उपरोक्त सभी परिभाषायें समीचीन हैं, परन्तु एकांगी हैं। इनमें रहस्यवाद के किसी एक पक्ष की प्रधानता बतलायी गयी है। वस्तुतः रहस्यवाद में ज्ञान, क्रिया और भाव तीनों का समावेश है। इन तीन तत्त्वों को समानतः महत्वपूर्ण मानते हुए डीन इंज का कहना है कि "रहस्यवाद वह दिव्यानुभूति है जिसमें ज्ञान, भाव और क्रिया का सुन्दर समन्वय है। इनका समन्वय ही रहस्यवाद को पूर्ण बनाता है।" दूसरे शब्दों में यह समग्र अनुभूति है जो अत्यन्त गूढ़ या रहस्यात्मक होती है।

रहस्यवाद की विशेषताएँ

(Characteristics of Mysticism)

अधोलिखित विशेषतायें रहस्यवाद के आवश्यक अंग हैं। इसका तात्पर्य यह है कि ये विशेषतायें जिसमें उपलब्ध हों, वह रहस्यवाद है।

(क) अनिर्वचनीयता—रहस्यानुभूति अनिर्वचनीय होती है। इसका तात्पर्य यह है कि रहस्य की अनुभूति वचन-विन्यास के परे होती है। इसे शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता। इसका रसास्वादन किया जा सकता है, परन्तु इसे अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता। अनुभूति की गहराई को शब्दों में नहीं लाया जा सकता। इसके लिए प्रेमी-मन के समान हृदय की आवश्यकता है।

(ख) बौद्धिकता—रहस्यवाद को अन्तरंग हृदय का अद्‌भुत भाव समझा जाता है, परन्तु यह अचेतन भाव नहीं। यह ज्ञान की गहराई है जिसमें ज्ञाता और ज्ञेय की एकता का साक्षात् ज्ञान होता है। दूसरी बात यह है कि यदि यह अबौद्धिक हो तो अप्रामाणिक होगा, परन्तु ऐसी बात नहीं। इसकी प्रामाणिकता अलौकिक है, यह सन्देह शून्य सत्य है।

(ग) अस्थायित्व या क्षणिकता—रहस्यात्मक अनुभूति क्षणिक होती है। हवा के झँकोरे या समुद्र की लहरों के समान किसी विशेष क्षण में इसका उदय होता है तथा सत्वर अस्त हो जाता है, परन्तु जिस क्षण में इसकी उत्पत्ति होती है, यह

… direct experience of what is believed to

Scanned by TapScanner

अत्यन्त तीव्र होती है, बाद में क्षीण होने लगती है। यह दिव्यानुभूति है; इसकी उत्पत्ति के समय एक विचित्र बेचैनी और कम्पन-धड़कन का अनुभव होता है।

(घ) निष्क्रियता—इसकी उत्पत्ति के समय सभी भौतिक इन्द्रियाँ शिथिल पड़ जाती हैं, साधक किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाता है। पराशक्ति के वश में वह अपने को पराधीन सा अनुभव करता है, मन्त्र-मुग्ध हो किसी अज्ञात-स्वर को सुनने लगता है।

(ङ) ऐक्य का अनुभव—रहस्यानुभूति के समय उपासक और उपास्य के बीच का द्वैत समाप्त हो पूर्ण-अद्वैत या तादात्म्य का अनुभव होने लगता है। इस स्थिति के उत्पन्न होते ही उपासक को केवल उपास्य-देव ही दिखलायी देने लगते हैं-

हममें तुममें खड्ग खम्भ में घट-घट व्यापै राम—कबीर

अथवा

सिया-राम मय सब जग जानी,
करहुँ प्रनाम जोरि जुग पानी।—तुलसीदास

यह सभी भूतों में भगवान और भगवान में सभी भूतों की स्थिति है।

(च) परमानन्द का अनुभव—जिस क्षण रहस्य की स्थिति की अनुभूति होती है, साधक परम-आनन्द का अनुभव करता है। आनन्द से विभोर हो वह एक प्रकार के उन्माद का अनुभव करने लगता है। इस आनन्द का शब्दों में वर्णन नहीं किया जा सकता। साधक नाचने-गाने लगता है, प्रलाप भी करने लगता है।

(छ) जीवन में परिवर्त्तन—रहस्य की अनुभूति प्राप्त कर व्यक्ति का जीवन-क्रम परिवर्तित हो जाता है। अब साधक भूख-प्यास से बेचैन नहीं होता, एक विचित्र संसार में लीन या खोया हुआ सा रहने लगता है। उसे सर्वदा वही दिव्यानुभूति का दृश्य दिखलायी पड़ने लगता है, बाह्य-जगत को वह अपने भीतर देखने लगता है।

(ज) नैतिक उत्कर्ष—रहस्यानुभूति को प्राप्त साधक का शरीर पूर्णतः पवित्र हो जाता है। उसका जीवन दूसरों के लिये आदर्श है, उसका चरित्र अनुकरणीय। वह कभी कुमार्ग पर नहीं चलता और वासनाओं का दास नहीं बनता। मन शान्त, बुद्धि स्थिर, अहंकार शून्य, जीवन पवित्र हो जाता है। देह-जन्य विकारों से मुक्त वह परम शान्ति का अनुभव करने लगता है। उसके जीवन में काम-क्रोध, राग-द्वेष, मान-माया आदि मूलतः समाप्त हो जाते हैं।

Scanned by TapScanner